Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVI, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

शिवार्य कृत 'भगवती आराधना' में समाज व संस्कृति की झलक

रुचि जैन* डॉ. सत्यप्रकाश पाण्डे डॉ. संगीता मेहता*****

* शोधार्थी (दर्शनशास्त्र) श्री अटल बिहारी वाजपेई शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** शोध-निर्देशक(दर्शनशास्त्र) श्री अटल बिहारी वाजपेई शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
*** सह शोध-निर्देशक (संस्कृत) श्री अटल बिहारी वाजपेई शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – आचार्य शिवार्य कृत **भगवती आराधना** में प्रमुख रूप से जैन-धर्म की आचार मीमांसा के प्रमुख अंग समाधिमरण और चार प्रकार की आराधनाओं का वर्णन किया है। शिवार्य के समक्ष जैन संघ के चारों अंग साधु, साध्वी, श्रावक तथा श्राविका का समाज रहा है। उनके आत्म विकास के सम्बन्ध में भगवती आराधनाकार ने उक्त ग्रन्थ में विस्तार से विभिन्न विषयों को प्रस्तुत किया है। प्रसंगवश शिवार्य के समकालीन समाज और संस्कृति का चित्रण भी इस ग्रन्थ में उपलब्ध है।

आचार्य शिवार्य ने समाज में आदर्श जीवन का निर्वाह करने के लिए साधुओं की आचार संहिता के अन्तर्गत महाव्रतों के प्रसंग में कहा है कि तरुण एवं वृद्ध की संगति भिन्न-भिन्न प्रकार से जीवन पर प्रभाव डालती है, अवस्था मात्र से कोई वृद्ध अथवा तरुण नहीं होता अपितु जिसके शील, क्षमा, सन्तोष आदि गुण बढ़े हुए हो वहीं वृद्ध अर्थात् अनुभवी कहे जाने योग्य हैं, ऐसे शील और चरित्र से युक्त व्यक्तियों की सेवा करना वृद्ध सेवा है, गुणों से वृद्ध पुरुषों की सेवा करने से मनुष्य के गुणों में वृद्धि होती है।[1]

आचार्य शिवार्य मनोवैज्ञानिक एवं अनुभवी समाजषास्त्री थे, उन्होंने वृद्ध सेवा के गुणों के महत्त्व के साथ-साथ अवस्था के महत्त्व को भी स्वीकार किया है। वे कहते हैं कि गुणों से वृद्ध व्यक्तियों का संसर्ग लाभकारी है, क्योंकि जैसे-जैसे मनुष्य आयु के कारण प्रौढ़ अथवा वृद्धावस्था को प्राप्त होता है, उसके लोभ, राग, द्वेष, घमण्ड आदि भी मन्द होते जाते हैं। ऐसे मन्द कषायी वाले वृद्ध व्यक्तियों की संगति से व्यक्ति के राग-द्वेष, लोभ आदि भी मन्द हो सकते हैं। उदाहरण से इस बात को दृढ़ भी किया है, जैसे – तालाब में पत्थर के गिरने से पानी के नीचे बैठी हुई धूल अथवा कीचड़ ऊपर आकर जल को मैला कर देती हैं, उसी प्रकार से तरुण व्यक्तियों की संगति प्रशान्त वृद्ध लोगों के मोह एवं काम की प्रवृत्ति को उद्वेलित कर देती है। और जैसे कत्ताक फल (रीठाफल-निर्मली के पौधे का फल) पानी में डालने से गन्दा पानी भी निर्मल हो जाता है। उसी प्रकार, वृद्ध पुरुषों की सेवा से कलुशित, मोह इत्यादि शान्त हो जाते हैं।[2] इसके पश्चात् उन्होंने समाज की धुरी सर्वत्र गुणयुक्त एवं धर्मशील नारियों की प्रशंसा की है। शीलवती नारियों के विषय में वे कहते हैं कि जो गुणसहित स्त्रियाँ हैं, उनका यश लोक में फैला हुआ है तथा जो इस संसार में देवों में भी पूजनीय है उनकी जितनी प्रशंसा की जाए कम है। क्योंकि तीर्थंकर, चक्रवर्ती, वासुदेव, बलदेव और श्रेष्ठ गणधरों को जन्म देने वाली महिलाएँ श्रेष्ठ देवों और उत्ताम पुरुषों के द्वारा पूजनीय होती है।[3] शिवार्य ने साथ ही आत्मविकास में बाधक के रूप में नारियों की कमजोरियों एवं दुर्गुणों को इस ग्रन्थ में वर्णित किया है वे कहते हैं कि –

स्त्रियों में विशेष विश्वास, स्नेह, परिचय, उचित नहीं है। वे परपुरुष पर आसक्त होने पर शीघ्र ही अपने कुल को अथवा कुलीन पति को भी छोड़ देती है।[4] इस प्रकार शिवार्य ने कई गाथाओं के माध्यम से भगवती आराधना में दोष युक्त नारी के दोषों का प्रगटीकरण किया है।[5] साथ ही कुलीन, चरित्रवान स्त्रियों के गुणों में आदरभाव भी प्रगट किया है।

नारी के चरित्र-चित्रण के उक्त विवरण के प्रसंग में आचार्य शिवार्य ने एक महत्त्वपूर्ण गाथा प्रस्तुत की है – नारियों के सम्बन्ध में जो दोष मैंने यहाँ प्रतिपादित किए हैं, वे प्रकारान्तर से पुरुषों में भी पाए जाते हैं। पथ-भ्रष्ट स्त्रियों में जो दोष होते हैं वे दोष पथ भ्रष्ट पुरुषों में भी होते हैं अथवा मनुष्यों में भी जो बल और शक्ति से युक्त होते हैं उनमें स्त्रियों से भी अधिक दोष होते हैं। जैसे अपने संयम एवं शील की रक्षा करने वाले पुरुषों के लिए परस्त्रियाँ निन्दनीय हैं वैसे ही अपने शील की रक्षा करने वाली स्त्रियों के लिए परपुरुष निन्दनीय है।[6]

आगे भगवती आराधनाकार कहते हैं कि दोषों की उपस्थिति के लिए नारी और पुरुष उतने जिम्मेदार नहीं हैं जितने कि उनके मन के भीतर बैठी हुई कशाय की प्रवृत्तियाँ हैं। मोह और तृष्णा इत्यादि के द्वारा ही ये दुर्मति पैदा होती है, यथा – सब जीव मोह के उदय से कुषील से मलिन होते हैं और वह मोह का उदय स्त्री-पुरुषों में समान रूप से होता है।[7] आचार्य शिवार्य ने इस नारी निन्दा विषयक प्रसंग के अन्तर्गत नारियों के सम्बन्ध में प्रचलित कतिपय शब्दों के व्युत्पत्ति मूलक अर्थों को भी स्पष्ट किया है। ये शब्द नारी के व्यक्तित्त्व के विकास को तो स्पष्ट करते ही हैं, साथ ही कोषशास्त्र की दृष्टि से भी इनका विशेष महत्त्व है।

भगवती आराधना में शिवार्य की दृष्टि से नारी के लिए प्रचलित कतिपय शब्दों की परिभाषाएँ इस प्रकार हैं –

1. **वधू** – पुरुष का वध करती है इसलिए उसे वधू कहते हैं।
2. **स्त्री** – मनुष्य में दोषों को एकत्र करती है इसलिए स्त्री कहलाती है।
3. **नारी** – मनुष्य का 'अरि' अर्थात् शत्रु दूसरा कोई नहीं है इसलिए उसे नारी कहते हैं।
4. **प्रमदा** – पुरुष को सदा प्रमत्त करती है इसलिए उसे प्रमदा कहते हैं।
5. **विलया** – पुरुष के गले में अनर्थ लाती है अथवा पुरुष को देखकर विलीन होती है इसलिए उसे विलया कहते हैं।
6. **योषा** – पुरुष को दुःख से योजित करती है इससे युवती और योषा कहते हैं।

7. अबला – जिसके हृदय में धैर्य रूपी बल नहीं होता है अत: वह अबला कही जाती है।

8. कुमारी – कुमरण का उपाय उत्पन्न करने से कुमारी कहते हैं।

9. महिला – पुरुष पर आल– दोषारोपण करती है इसलिए महिला है। इस प्रकार स्त्रियों के सब नाम अशुभ होते हैं।[8] इस प्रकार शिवार्य ने स्त्रियों के दोषों का जो वर्णन किया है वह स्त्री सामान्य की दृष्टि से किया है। शीलवती स्त्रियों में ऊपर कहे दोष नहीं होते वे तो सर्वत्र पूजनीय होती है।[9]

आचार्य का यह कथन सांसारिक दृष्टि से विशेष महत्त्व का है, इस कथन के द्वारा उन्होंने समाज में नारियों के प्रति जो प्रतिष्ठा बढ़ रही थी उसकी ओर संकेत किया है। शिवार्य का यह कथन पुरुष और नारी के समानता का भी उद्घोषक है तथा दुर्गुणों के मूल कारणों तक पहुँचने की उनकी दृष्टि का भी परिचायक है।

भगवती आराधना में श्रमणों के आचार वर्णन प्रसंग में आहारचर्या का उल्लेख है। श्रमणों को प्रासुक आहार लेना चाहिए, कई प्रकार के दोषयुक्त आहार तथा पानक आदि नहीं लेने चाहिए। ग्रन्थ में तत्कालीन समय के समाज में प्रचलित अनेक प्रकार के भोजन एवं पानक वस्तुओं की सूची प्राप्त होती है उनका वर्गीकरण स्वाद्य रूप तीन प्रकार से किया गया है। पकाए हुए भोजन के पारस्परिक सम्मिश्रण से उनके जो सांकेतिक नाम प्रचलित थे, वे इस प्रकार हैं[10] –

1. संसिट्ठ – जो शाक आदि व्यंजन से मिला हुआ हो।

2. फलिह – जिसके चारों ओर शाक बीच में भात रखा हुआ हो।

3. परिखा – चारों ओर व्यंजन हो बीच में अन्न रखा हो।

4. पुप्फोवहिद – व्यंजनों के मध्य में पुष्पावली के समान चावल रखे हों।

5. सुद्धगोवहिदं – शुद्ध अर्थात् बिना कुछ मिलाए अन्न से 'उपहित' अर्थात् मिले हुए शाक व्यंजन आदि।

6. लेवड – जिससे हाथ लिप जाए।

7.अलवेड – जो हाथ से न लिप्त हो।

8. पान – सिक्थ सहित पेय और सिक्थ रहित पेय।

9. धृतपूरक – आटे की बनाई हुई पूड़ी।

भोज्य पदार्थों के अतिरिक्त पेय पदार्थों का विवरण **भगवती आराधना** में पृथक् रूप से प्राप्त होता है, जिन्हें छ: प्रकार का बताया गया हैं –

1. स्वच्छ – गर्म जल सौवीरक।

2.बहल – इमली आदि फलों का रस।

3. लेवड – दही आदि जो हाथ से लिप्त हो जाता है।

4. अवलेवड – माँड आदि (जो हाथ से लिप्त न हो।

5. सिक्थ – सिक्थ सहित पेय।

6. सिक्थ – सिक्थ रहित पेय। ये छहों प्रकार के पानक परिकर्म योग्य हैं।[12] विभिन्न पेशों एवं पेशेवर जातियों के उल्लेखों की दृष्टि से **भगवती आराधना** का विशेष महत्त्व है। ईस्वी की प्रथम शताब्दी में प्राचीन भारत में कितने प्रकार के आजीविका के साधन थे उन साधनों में लगे हुए लोग किस नाम से पुकारे जाते थे, इस ग्रन्थ में इसकी जानकारी प्राप्त होती है। तत्कालीन सामाजिक दृष्टि से भी उनका विशेष महत्त्व है। महाजनपदयुग (6 बी.सी.) विभिन्न पेशों अथवा शिल्पों का विकास युग माना गया है, 36 प्रकार की जातियों की स्पष्ट झलक **भगवती आराधना** में मिलती है, जो इस प्रकार हैं[12] – **1. गंधव्व** (गान्धर्व) **2. णट्ट (नर्त्तक) 3. जट्ट** (हस्तिपाल) **4. अस्स** (अश्वपाल) **5. चक्क** (कुम्भकार) **6. जंत** (तिल, इक्षुपीलनयन्त्र, यान्त्रिका) **7. अग्गिकम्म** (आतिशबाजी) **8. फरूस** (शांखिक, मणिकार, आदि) **9. णत्तिक** (कौलिक, जुलाहा) **10. रजक** (रजय) **11. पाडहि** (पटहवादक) **12. डोम्ब** (डोम) **13. णड** (नट) **14. चारण** (भाट, गायक) **15. कोट्टय** (कुट्टक, लकड़ी काटने वाला) **16. करकच** (कतर–व्योंत करने वाला) **17. पुष्पकार** (माली) **18. कल्लाल** (नशीली वस्तुएँ बेचने वाला) **19. मल्लाह**[13] **20. काष्ठिक** (बढ़ई) **21. लौहिक** (लुहार) **22. मात्सिक 23. पात्रिक 24. कांडिक 25. दाण्डिक 26. चार्मिक 27. छिंपक 28. भेषक 29. पण्डक 30. सार्थिक** (सेवक) **31. ग्राविक 32. कोट्टपाल 33. भट 34. पण्यनारीजन 35. द्यूतकार 36. विट**। ये सभी जातियाँ शिवार्य के समय में सामाजिक व्यवस्था हेतु प्रचलित थी।

प्राचीन भारत के **आर्थिक जीवन एवं उद्योग–धन्धों के भी** इस ग्रन्थ में विवरण मिलते हैं, जिनसे यह विदित होता है कि दोषियों के प्रति दण्ड–प्रथा अत्यन्त कठोर होने एवं जनसामान्य के प्राय: सरल होने के कारण तथा कठोर परिश्रम पर बल देने के कारण उस युग का औद्योगिक वातावरण शान्त रहता था। सभी को अपनी प्रतिभा, चतुराई एवं योग्यतानुसार प्रगति के समान अवसर प्राप्त रहते थे। कुटीर एवं लघु उद्योग–धन्धों का प्रचलन सामान्य था, जिसे समाज एवं राज्य का सहयोग एवं संरक्षण प्राप्त रहता था। कुछ प्रमुख उद्योग एवं धन्धों का विवरण इस प्रकार है –

1. चर्मोद्योग – चमड़े पर विविध प्रकार के वज्रलेप आदि करके उससे विविध वस्तुओं का निर्माण।[14]

2. सूती वस्त्रोद्योग – सूत्री वस्त्रों का निर्माण, उन पर चित्रकारी, वस्त्र सिलाई, कटाई एवं रंगाई।[15]

3. रेशमी वस्त्रोद्योग – रेशम के कीड़े का पालन–पोषण एवं रेशमी वस्त्र का निर्माण।[16]

4. बर्तन निर्माण – शिवार्य के समय में काँसे के बर्तनों का निर्माण अधिक होता था। स्वास्थ्य के लिए हितकर होने की दृष्टि से उसका प्रचलन अधिक था। आयुर्वेदीय सिद्धान्त के अनुसार उसमें भोजन–पान करने से प्रयोक्ता को विशिष्ट ऊर्जा–शक्ति की प्राप्ति होती थी।[17]

5.सुगन्धित पदार्थों का निर्माण – शारीरिक सौन्दर्य के निखार हेतु जड़ी–बूटियों का लोध्र आदि पदार्थों में स्नान पूर्व मर्दन, अभ्यंगन की सामग्री का निर्माण, मिट्टी के सुवासित मुख लेपन चूर्ण (थंबमचंबा) एवं अन्य वस्तुएँ।[18]

6. रत्न छेदन घर्षण – रत्नों की खरीद एवं उनमें छेद करना।[19]

7. औषधि निर्माण – तरह–तरह की रोग निवारक, वात, पित्त, कफ के रोगों की नाशक औषधियों का निर्माण।[20]

8. आभूषण निर्माण – मुकुट अंगद, हार, कड़े आदि बनाने के साथ–साथ लोहे पर सोने का मुलम्मा अथवा पत्ता पानी चढ़ाना तथा लाख की चूड़िया बनाना।[21]

9. मूर्ति निर्माण [22]

10. चित्र निर्माण [23]

11. युद्ध सामग्री का निर्माण

12. नौका निर्माण

13. लौह उद्योग – दैनिक आवश्यकताओं की वस्तुएँ तैयार करना। इस शिवार्य कालीन औद्योगिक विकास सन्तुष्टि प्रदायक आजीविका अनुकूल था।

भगवती आराधना यद्यपि धर्म–दर्शन एवं आचारपरक ग्रन्थ है, फिर भी उसमें भूगोल के तत्कालीन प्रचलित कुछ उल्लेख प्राप्त होते हैं, जिनका

आधुनिक भौगोलिक सिद्धान्तों के सन्दर्भ में वर्गीकरण एवं विष्लेषण प्रो. राजाराम जैन ने अपने आलेख में किया है।[24]

प्रो. राजाराम के मूल्यांकन के अनुसार – पर्वतों में मुद्गल पर्वत[25] (आधुनिक मुंगेर बिहार), कोल्लगिरी[26] (कावेरी नदी का उद्गम स्थल) एवं द्रोणगिरि[27] पर्वत के उल्लेख **भगवती आराधना** में मिलते हैं। नदियों में **गंगा**[28] एवं यमुना के नामोल्लेख मिलते हैं, यमुना को **णइपूर**[29] कहा गया है अर्थात् ग्रन्थकार के समय से लेकर टीकाकार के समय तक यमुना नदी में अन्य नदियों की अपेक्षा अधिक बाढ़ आती रहती थी। अत: उसका अपरनाम **'णइपूर' (बाढ़ वाली नदी)** के नाम से प्रसिद्ध रहा होगा।

अन्य सन्दर्भों में देखें तो **भगवती आराधना** में **पृथ्वी** के भेदों में मिट्टी, पाषाण, बालू, नमक आदि, **जल** के भेदों में हिम, ओसकण, हिम बिन्दु आदि, **वायु** के भेदों में झंझावात (जल– वृष्टि युक्त वायु Cyclonic Winds) तथा माण्डलिक वायु (वर्तुलाकार भ्रमण करती हुई) तथा **वनस्पति** के भेदों में बीज, अनन्तकायिक, प्रत्येक कायिक, वल्ली, गुल्म, लता, तृण, पुष्प एवं फल आदि को लिया गया है[30] जो वर्तमान प्राकृतिक भूगोल के लिए भी शोध का विषय है।

प्राकृतिक दृष्टि में प्रदेशों का वर्गीकरण कर उनका नामकरण है –

1. **अनूप देश** (जलबहुल प्रदेश)
2. **जांगल देश** (वन–पर्वत बहुल एवं अल्पवृष्टि वाला प्रदेश)
3. **साधारण देश** (उक्त प्रथम दो लक्षणों के अतिरिक्त स्थिति वाला प्रदेश)।[31]

राजनैतिक भूगोल के अन्तर्गत प्रशासनिक सुविधाओं की दृष्टि से द्वीपों, समुद्रों, देशों, नगर–ग्रामों आदि की कृत्रिम सीमाएँ निर्धारित की जाती है। इस दृष्टि से **भगवती आराधना** का अध्ययन करने से उसमें कुछ देश, नगर एवं ग्रामों के नामोल्लेख मिलते हैं। जो इस प्रकार हैं –

देशों में बर्बर, चिलातक, पारसीक, अंग, बंग एवं मगध नाम प्राप्त होते हैं। जैन परम्परा के अनुसार ये देश कर्म–भूमियों के अन्तर्गत वर्णित हैं। आचार्य शिवार्य ने प्रथम तीन देश म्लेच्छ देशों में बताकर उन्हें संस्कार विहीन देश कहा है।[32]

महाभारत में भी बर्बर को एक प्राचीन म्लेच्छ देश तथा वहाँ के निवासियों को बर्बर कहा गया है।[33] नकुल ने अपनी पश्चिमी दिग्विजय के समय उसे जीतकर भेंट वसूल की थी। एक अन्य प्रसंग के अनुसार वहाँ के लोग युधिष्ठिर के राजसूर्य यज्ञ में भेंट लेकर आए थे।[34] प्रतीत होता है कि बर्बर देश ही आगे चलकर अरब देश के नाम से प्रसिद्ध हो गया।

उत्तराध्ययन की **सुखबोध टीका** के मूल कथानक में एक प्रसंगानुसार सार्थवाह अचल ने व्यापारिक सामग्रियों के साथ पारसकुल की यात्रा जल–मार्ग द्वारा की तथा वहाँ से अनेक प्रकार की व्यापारिक सामग्रियाँ लेकर लौटा।[35] प्रतीत होता है कि यही **भगवती आराधना** का पारसीक देश है। वर्तमान में इसकी पहचान ईराक–ईरान से की जाती है। क्योंकि ये देश आज भी (Percian Gulf) के नाम से प्रसिद्ध है।

चिलातक देश का उल्लेख बर्बर एवं पारसीक के साथ म्लेच्छ देशों में होने वाले से इसे भी उनके आस–पास ही होना चाहिए। सम्भव है कि वह वर्तमान चित्राल हो, जो कि वर्तमान पाकिस्तान का क्षेत्र है। अंग एवं मगध की पहचान वर्तमानकालीन बिहार तथा बंगदेश की पहचान वर्तमान बंगाल एवं बांग्लादेश से की गई है।[36] नगरों में पाटलीपुत्र[37], दक्षिण–मथुरा[38], मिथिला[39], चम्पानगर[40], कोसल अथवा अयोध्या एवं श्रावस्ती[41] प्रमुख हैं। ये नगर प्राच्य भारतीय वांड्मय में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। जैन, बौद्ध एवं वैदिक कथा–साहित्य तथा तीर्थंकरों तथा बुद्ध, राम एवं कृष्णचरित में और भारतीय इतिहास की प्रमुख घटनाओं का कोई न कोई प्रबल पक्ष इन नगरों के साथ इस भाँति जुड़ा हुआ है कि इनका उल्लेख किए बिना वे अपूर्ण है ऐसा प्रतीत होता है।

अन्य सन्दर्भ में कुल, ग्राम एवं नगर के उल्लेख आए हैं।[42] ग्रामों में **'एकरथ्या ग्राम'**[43] का सन्दर्भ आया है। सम्भवत: यह ऐसा ग्राम होगा जो कि एक ही ऋजुमार्ग के किनारे–किनारे सीधा लम्बा बसा होगा। समान स्वार्थ राज्यों एवं सुरक्षा को ध्यान में रखकर ग्राम, नगर अथवा राज्यों का जो संघ बन जाता था, वह कुल कहलाता है।

भगवती आराधना में 4 प्रकार के मनुष्यों का भी उल्लेख मिलता है –

1. **कर्मभूमिज** अर्थात् वे मनुष्य जो कर्मभूमियों में निवास करते हैं और जहाँ असि, मषि, कृषि, शिल्प, सेवा, वाणिज्य आदि के साथ–साथ पशु–पालन एवं व्यावहारिकता आदि कार्यों में आजीविका के साधन मिल सकें। साथ ही साथ स्वर्ग–मोक्ष प्राप्त करने के साधन भी मिल सकें। इस भूमि के मनुष्य अपने–अपने कर्मों एवं संस्कारों के अनुरूप प्राय: सुडौल एवं सुन्दर होते हैं।
2. **भोगभूमिज**, मनुष्य मद्यांग, तूर्यांग आदि 10 प्रकार के कल्पवृक्षों के सहारे जीवन व्यतीत करते हैं।
3. **भगवती आराधना** के टीकाकारानुसार **अन्तर्द्वीपज** मनुष्य वे हैं जो कालोदधि एवं लवणोदधि समुद्रों के बीच में स्थित 86 अन्तर्द्वीपों से कहीं उत्पन्न होते हैं। यू गूंगे, एक पैर वाले, पूंछ वाले, लम्बे कानों वाले एवं सींगों वाले होते हैं। किसी–किसी मनुष्य के कान तो इतने लम्बे होते हैं कि उन्हें ओढ़ सकते हैं। कोई–कोई मनुष्य हाथी एव घोड़े के समान कानों वाले होते हैं।
4. **सम्मूर्छन** मनुष्य कर्मभूमिज मनुष्यों के श्लेष्म, शुक्र, मल–मूत्र आदि अंगद्वारों के मल से उत्पन्न होते ही मर जाते हैं। उनका शरीर अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण बताया गया है।[44]

उक्त मनुष्य योनि के जीवों के प्रकारों में से अन्तिम तीन प्रकार के मनुष्यों का वर्णन विचित्र होने एवं नृतत्त्व–विद्या (Anthropology) से मेल न बैठने के कारण उन्हें पौराणिक–विद्या की कोटि में रखा जाता है।

शिवार्य कला एवं विज्ञान के भी जानकार थे। उन्हें भगवती आराधना में इस समय भी कला एवं विज्ञान का जो स्वरूप था उसकी झलक यहाँ प्रस्तुत की है। **भगवती आराधना** में **वास्तुकला** के अन्तर्गत गन्धर्वशाला, नृत्यशाला, हस्तिशाला, अश्वशाला, तैलपीलन, इक्षुपीलन सम्बन्धी यन्त्रशाला, चक्रशाला, अग्निकर्मशाला, शांखिक एवं मणिकारशाला, कौलिकशाला, रजकशाला, नटशाला, अतिथिशाला, मद्यशाला, देवकुल, उद्यानगृह आदि[45] **स्थापत्यकला एवं शिल्पकला** के अन्तर्गत लोहपडिमा[46](लोहे की प्रतिमा), पुव्वरिसीणपडिमा[47] (प्राचीन ऋषियों की प्रतिमा), कट्ठकम्म[48](काष्ठ, पाषाण, हाथीदाँत आदि में अंकित किए गए स्त्री–पुरुषों के रूप), चितकम्म[49] (चित्र में अंकित रूप), जोणिकसिलेसो[50] (चर्म के साथ उतरने वाला वज्रलेप), कंसियभिंगार[51] (काँसे का बना हुअर भृंगार), आदि तथा **संगीतकला** के अन्तर्गत पांचाल–संगीत[52] के नामोल्लेख मिलते हैं।

ईस्वी की प्रथम सदी के जैनाचार्य शिवार्य को तत्कालीन **भौतिक विज्ञान** की भी जानकरी थी, **भगवती आराधना** में उसका पुट मिलता है – जोणिकसिलेसो (वज्रलेप), रसपीदंयं (सोने के रस के लेप से बनी वस्तु),

कवडुक्कडं तनुसुवर्णपत्राच्छादितम्[53] (सोने के पतले पत्र से ढका लोहे का कढ़ा) तथा किमिरागकंवल[54] (कृमि के द्वारा त्यागे गए रक्त आहार से रंजित तन्तुओं से बना कंबल कृमिराग कंबल है।), जदुरागवत्थ स्वर्ण के साथ लाक्षा-क्रिया (लाख की क्रिया) आदि उदाहरण के रूप में वर्णित किए हैं।

भगवती आराधना में **आयुर्विज्ञान**-सम्बन्धी सामग्री उपलब्ध है। मानव-शरीर संरचना का वर्णन ग्रन्थकार ने विस्तारपूर्वक किया है, जो संक्षेप में निम्न प्रकार है :

1. मानव-शरीर में 300 हड्डियाँ हैं जो मज्जा नामक धातु से भरी हुई है। उनमें 300 जोड़ लगे हुए हैं।
2. मक्खी के पंख के समान पतली त्वचा से यदि यह शरीर न ढंका होता तो दुर्गन्ध से भरे इस शरीर को कौन छूता?
3. मानव शरीर में 900 स्नायु, 700 शिराएँ एवं 500 माँस-पेशियाँ हैं।
4. उक्त शिराओं के 4 जाल, 16 कंडरा (रक्त से पूर्ण महाशिराएँ) एवं 6 शिराओं के मूल हैं।
5. मानव शरीर में 2 माँसरज्जु हैं जिसमें एक पीठ और एक पेट के आश्रित हैं।
6. मानव शरीर में 7 त्वचाएँ, 7 कालेयक (माँस खण्ड) एवं 80 लाख करोड़ रोम हैं।
7. पक्वाशय एवं आमाशय में 16 आँतें रहती हैं।
8. दुर्गन्धमल के 7 स्थान है।
9. मनुष्य देह में 3 स्थूणा (वात-पित्त श्लेष्म), 107 मर्मस्थान और 9 व्रणमुख मलद्वार है जिनसे सदा मल बहता रहता है।
10. मनुष्य देह में वसा (चर्बी) नामक धातु 3 अंजुली प्रमाण, पित्त, 6 अंजुली प्रमाण एवं श्लेष्म (कफ) 6 अंजुली प्रमाण ही रहता है।
11. मनुष्य देह में मस्तक अपनी एक अंजुली प्रमाण है। इसी प्रकार मेद भी एक अंजुली प्रमाण है एवं ओज अर्थात् वीर्य एक अंजुली प्रमाण है।
12. मानव शरीर में रूधिर का प्रमाण आढ़क (बत्तीस पल प्रमाण), मूत्र 1 आढ़क प्रमाण तथा विष्ठा 6 प्रस्थ प्रमाण है।
13. मानव शरीर में 20 नख एवं 32 दाँत होते हैं।[55]
14. मानव-शरीर में समस्त रोम-रन्ध्रों से चिकना पसीना निकलता रहता है।[56]
15. मनुष्य के पैर में काँटा घुसने से उसमें सबसे पहले छेद होता है फिर उसमें अंकुर के समान माँस बढ़ता है फिर वह काँटा नाड़ी तक घुसने से पैर में माँस विघटने लगता है, जिससे उसमें अनेक छिद्र हो जाते हैं और पैर निरुपयोगी हो जाता है।[57]
16. यह शरीर रूपी झोपड़ी हव्यिों से बनी है। नस जाल रूपी बक्कल से उन्हें बाँधा गया हैं, माँस रूपी मिट्टी से उसे लीपा गया है और रक्तादि पदार्थ उसमें भरे हुए हैं।[58]
17. माता के उदर से वात द्वारा भोजन को पचाया जाकर जब उसे रस भाग एवं खल भाग में विभक्त कर दिया जाता है तब रस भाग का 1-1 बिन्दु गर्भस्थ बालक ग्रहण करता है। जब तक गर्भस्थ बालक के शरीर में नाभि उत्पन्न नहीं होती, तब तक वह चारों ओर से मातृभुक्त आहार ही ग्रहण करता है।[59]
18. दाँतों से चबाया गया, कफ से गीला होकर मिश्रित हुआ अन्न उदर में पित्त के मिश्रण से कडुआ हो जाता है।[60]

भौतिक एवं आध्यात्मिक विद्या-सिद्धियों के प्रमुख साधना-केन्द्र इस मानव तन का निर्माण किस-किस प्रकार से होता है। गर्भ में वह किस प्रकार आता है तथा किस प्रकार उसके शरीर का क्रमिक-विकास होता है, उसकी क्रमिक अवस्थाओं का ग्रन्थकार ने स्पष्ट चित्रण किया है -

माता के उदर में शुक्राणुओं के प्रविष्ट होने पर 10 दिनों तक मानव-तन गले हुए ताँबे एवं रजत के मिश्रित रंग के समान रहता है। अगले 10 दिनों में वह कृष्ण-वर्ण का हो जाता है। अगले 10 दिनों में वह यथावत् स्थिर रहता है। दूसरे महीने में मानव-तन की स्थिति एक बबूले के समान हो जाती है। तीसरे माह में वह बबूला कुछ कड़ा हो जाता है। चौथे मास में उसमें माँस-पेशियों का बनना प्रारम्भ हो जाता है। पाँचवें माह में उक्त माँस-पेशियों में पाँच पुलक अर्थात् पाँच अंकुर फूट जाते हैं, जिनमें से नीचे से दो अंकुरों से दो पैर और ऊपर के तीन अंकुर में से बीच के अंकुर से मस्तक तथा दोनों बाजुओं में से दो हाथों के अंकुर फूटते हैं। छठवें माह में हाथ-पैरों एवं मस्तक की रचना एवं वृद्धि होने लगती है। सातवें मास में उस मानव-तन के अवयवों पर चर्म एवं रोम की उत्पत्ति होती है तथा हाथ-पैर के नख उत्पन्न हो जाते हैं इसी मास में शरीर में कमल के डण्ठल के समान दीर्घनाल पैदा हो जाती है, तभी से यह जीव माता का खाया हुआ आहार उस दीर्घनाल से ग्रहण करने लगता है। आठवें मास में उस गर्भस्थ मानव-तन में हलन-चलन क्रिया होने लगती है। नौवें अथवा दसवें मास में वह सर्वांग होकर जन्म ले लेता है।[61] इस तरह **भ्रूण-विज्ञान** की चर्चा भगवती आराधना में दृष्टिगोचर होती है।

शरीर के रोगों एवं उपचार की भी भगवती आराधना में विस्तृत चर्चा है। उसमें से कुछ इस प्रकार हैं - आँख में 96 प्रकार के रोग होते हैं।[62] **मूलाराधना** के टीकाकार पं. आशाधर के अनुसार - शरीर में कुल मिलाकर 5,68,99,584 रोग होते हैं।[63] वात, पित्त एवं कफ के रोगों में भयंकर दाह उत्पन्न होती है।[64] ईख कुष्ठ रोग को नष्ट करने वाला रसायन है।[65] वात-पित्त-कफ से उत्पन्न वेदना की शान्ति के लिए आवश्यकतानुसार वस्तिकर्म (एनिमा), उष्णकरण (गर्म लोहे से दागना), ताप-स्वेदन (पसीना लाना), आलेपन (लेप करना), अभ्यंगन एवं परिमर्दन (प्रासुक जल का सेवन करना) क्रियाओं के द्वारा चिकित्सा करनी चाहिए।[66] गोदुग्ध, अजमूत्र एवं गोरोचन से पवित्र औषधियाँ मानी गई है।[67] काँजी पीने से मदिराजन्य उन्माद नष्ट हो जाता है।[68] मनुष्य को तेल एवं कशायले द्रव्यों का अनेक बार कुल्ला करना चाहिए, इससे जीभ एवं कानों में सामर्थ्य प्राप्त होता है अर्थात् कशायले द्रव्य के कुल्ले करने से जीभ के ऊपर का मल निकल जाने से वह स्वच्छ हो जाने के कारण स्पष्ट एवं मधुर वाणी बोलने की सामर्थ्य प्राप्त होती है।[69] मनुष्य को अन्न पानकों की अपेक्षा पानक अधिक लाभकर होता है, क्योंकि उससे कफ का क्षय, पित्त का उपषम एवं वात का रक्षण होता है। पेट की मल शुद्धि के लिए मांड सर्वश्रेष्ठ रेचक है। काँजी से भीगे हुए बिल्व-पत्रादिकों से उदर को सेंकना चाहिए तथा सेंधा नमक आदि से संसिक्त वत्ती गुदा-द्वार में डालने से पेट साफ हो जाता है।[70] पुरुष के आहार का प्रमाण 32 ग्रास एवं महिला का 28 ग्रास होता है।[71] उपवास के बाद मित और हल्का भोजन लेना चाहिए।[72]

इस प्रकार **भगवती आराधना** नामक ग्रन्थ नि:सन्देह ही सिद्धान्त, आचार, अध्यात्म तथा मनोवैज्ञानिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक सामग्रियों का कोष ग्रन्थ है। आचार्य शिवार्य ने उक्त सन्दर्भों के हर पहलू को उजागर कर जनमानस को अमूल्य निधि प्रदान की है। इसके अध्ययन से प्राकृत के ग्रन्थों के सांस्कृतिक अध्ययन की प्रेरणा मिलती है। यह ग्रन्थ प्राकृत-साहित्य के अध्ययन की दिशा में नए तत्त्वों को जोड़ता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. भगवती आराधना, गाथा 1064-1065
2. वही, गाथा 1066-1067
3. भगवती आराधना, गाथा 989-990
4. महिलासु णत्थि वीसंभपणयपरिचयकदण्णदा णेहो।
   लहुमेव परगयमणा ताओ सकुलंपि जहंति।। - वही, गाथा 937
5. वही, गाथा 942, 951, 957, 981
6. वही, गाथा 987-988
7. मोहोदयेण जीवो सव्वो दुस्सीलमइलिदो होदि।
   सो पुण सव्वो महिला पुरिसाणं होइ सामण्णो।।- वही, गाथा 995
8. वही, गाथा 971-975
9. वही, गाथा 996
10. संसिट्ठ फलिह परिखा पुप्फोवहिदं व सुद्धगोवहिदं।
    लेवऽमलेवडं पाणाय च णिस्सित्थं ससित्थं।। - वही, गाथा 222
11. सत्थं वहलं लेवडमलेवडं च ससित्थयमसित्थं।
    छव्विहपाणयमेयं पाणयपरिकम्मपाओग्गं।।- वही, गाथा 699
12. वही, गाथा 632, 633
13. देखें, मूलाराधना की अमितगति सं. टीका श्लोक सं. 656-657, गाथा 1774, पृ. 834-835
14. चम्मेण सह अवेंतो ण य सरिसो जोणिकसिलेसो।। - वही, गाथा 339
15. तुण्णेइ वुणइ जाचइ कुलम्मि जादो वि विसयवसो।।- वही, गाथा 911
16. कोसेण कोसियारूव्व दुम्मदी णिच्च अप्पाणं।। - वही, गाथा 913
17. जह कंसियभिंगारो अंतो णीलमइलो बहिं चोक्खो।।- वही, गाथा 581
18. वज्जेदि बंभचारी गंधं मल्लं च धूपवासं वा।
    संवाहणपरिमद्दणपिणिद्धणादीणि य विमुत्ती।।- वही, गाथा 93
19. वइरं रदणेसु जहा गोसीसं चंदणं व गंधेसु।
    वेरूलियं व मणीणं तह ज्झाणं होइ खवयस्स।।- वही,, गाथा 1890
20. वही, गाथा 1564
21. रसपीदयं व कडयं अहवा कवडुक्कडं जहा कडयं।
    अहवा जदुपूरिदयं तधिमा सल्लुद्धरणसोधी।।- वही, गाथा 585
22. पुव्वरिसीणं पडिमाओ वंदमाणस्स होइ जदि पुण्णं।- वही, गाथा 2002
23. सो चित्तकम्मसमणीव्व समणरूवो असमणो हु।।- वही, गाथा 1330
24. प्रो. राजाराम जैन, मूलाराधना का ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक मूल्यांकन (लेख), आचार्य श्री देशभूषण जी महाराज, अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ. 61-62
25. भारत के प्राचीन जैन तीर्थ, डॉ. जे.सी. जैन, वाराणसी, 1952, पृ. 26
26. भगवती आराधना, गाथा 2067, महाभारत, सभापर्व, 31/68
27. वही, गाथा 1547
28. भगवती आराधना, गाथा 1538
29. वही, गाथा 1540
30. अनूपजागंलसाधारणक्षेत्र परिज्ञानं। - वही, गाथा 453, विजयोदया टीका, पृ. 357
31. वही, गाथा 610, विजयोदया टीका, पृ. 418
32. वही, गाथा 1863, विजयोदया टीका, पृ. 830
33. महाभारत - सभापर्व, 32/17
34. महाभारत - सभापर्व, 51/23
35. प्राकृत प्रबोध (मूलदेव कथानक), चौखम्बा, वाराणसी
36. मूलाराधना का ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक मूल्यांकन लेख, प्रो. राजाराम, पृ. 63
37. भगवती आराधना, गाथा 2068
38. वही, गाथा 59, विजयोदया टीका, पृ. 101
39. वही, गाथा 751, विजयोदया टीका, पृ. 470
40. वही, गाथा 758
41. वही, गाथा 2067, 2069
42. वही, गाथा 295
43. वही, गाथा 112
44. वही, गाथा 448, विजयोदया टीका, पृ. 344
45. वही, गाथा 632-633
46. वही, गाथा 1564
47. वही, गाथा 2002
48. वही, गाथा 1053
49. वही, गाथा 1330
50. वही, गाथा 339
51. वही, गाथा 581
52. वही, गाथा 1350
53. वही, गाथा 585
54. वही, गाथा 569
55. वही, गाथा 1021-1029
56. भगवती आराधना, गाथा 1036
57. वही, गाथा 467
58. वही, गाथा 1810
59. वही, गाथा 1010
60. वही, गाथा 1009
61. वही, गाथा, 1001-1004
62. वही, गाथा 1048
63. पंचेव य कोडीओ भंवति तह अट्ठसट्ठिलक्खाइं।
    णवणवरिं च सहस्सा पंचसया होंति चुलसीदी।।
    - मूलाराधना, गाथा 1054
64. भगवती आराधना, गाथा 1047
65. वही, गाथा 1217
66. वही, गाथा 1493-1494
67. वही, गाथा 1046
68. वही, गाथा 362
69. वही, गाथा 687
70. वही, गाथा 700-702
71. वही, गाथा 213
72. वही, गाथा 253

****